संपादकीय

कुछ दिन पहले पता चला कि जयपुर के कुछ नामी-गिरामी निजी स्कूलों में शिक्षा के अधिकार कानून के तहत गरीब एवं पिछड़े वर्ग के बच्चों के लिए आरक्षित पच्चीस प्रतिशत सीटों पर दिए गए प्रवेशों में से ड्रॉप-आउट शुरू हो गया है। शिक्षा के अधिकार कानून पर हुई बहसों का अधिकांश इसी मुद्दे के इर्द-गिर्द केन्द्रित रहा है। इस कानून को लागू हुए तीन साल पूरे होने जा रहे हैं और सरकारी शिक्षा तंत्र ने बजाय सभी स्कूलों (सरकारी एवं निजी) में कानून के समस्त प्रावधान को लागू करने के अपनी ऊर्जा का बड़ा हिस्सा इस प्रावधान को क्रियान्वित करने पर लगाया है। इसके बावजूद निजी स्कूलों से इन बच्चों के ड्रॉप-आउट की समस्या पर अभी तक न तो विभाग का ध्यान गया है और न ही इस समस्या पर विधिवत जानकारी एकत्रित करने की सजगता दिखाई देती है। हमें अभी तक यह भी नहीं पता है कि इस समस्या की गहनता का स्तर क्या है।

निश्चित रूप से इस समस्या के कारणों को समझने के लिए अध्ययन की आवश्यकता है। शिक्षा के अधिकार कानून के लागू होने के बाद पहली कक्षा या स्कूल की शुरुआती कक्षा में प्रवेश मिलना आरंभ हुआ था। अभी इसके दो अकादमिक सत्र पूरे होने जा रहे हैं और तीसरे सत्र में प्रवेश देने की घोषणाएं स्कूल करने लगे हैं। इन आरक्षित सीटों पर हुए प्रवेशों को लेकर पहले भी बहुत-सी समस्याएं उजागर हुई हैं। अधिकांश 'अभिजात' निजी स्कूल कानून के इस प्रावधान से खुश नहीं हैं। उन्हें यह अपनी अभिजात्यता में 'अपवित्रता' का अनपेक्षित मिश्रण महसूस होता है। उनके लिए यह महज कानूनी बाध्यता है। वे न तो इन बच्चों के प्रति सद्भाव रखते हैं और न ही प्रवेशों के लिए संकल्पित हैं। इस कानून से उम्मीद रखने वाले लोगों के मन में इस प्रावधान को लेकर आरंभ से ही यह दुविधा थी कि ये बच्चे इन स्कूलों में सामंजस्य कैसे स्थापित करेंगे।

शिक्षा के अधिकार कानून में सभी निजी स्कूलों में गरीब एवं पिछड़े वर्ग के बच्चों के लिए आरक्षित की गई 25 प्रतिशत सीटों के प्रावधान के बारे में दो प्रमुख तर्क दिए जा रहे थे। एक तर्क था कि इन स्कूलों को सरकार के द्वारा तमाम तरह की सहूलियतें दी जाती हैं। अतः उसकी एवज में इन स्कूलों को समाज के लिए योगदान करना चाहिए। दूसरा तर्क था कि कानून का यह प्रावधान विभिन्न वर्गों के बच्चों को वैधानिक रूप से साथ मिलाने का एक कदम है जो 'अभिजात' बच्चों के लिए शिक्षणशास्त्र के लिहाज से फायदेमंद हो सकता है। इसमें यह मान्यता निहित है कि विभिन्न वर्ग के बच्चों के बीच की अन्तःक्रिया उन्हें एक-दूसरे के प्रति संवेदनशील बनाएगी और भविष्य में सामाजिक सामंजस्य स्थापित करने में मददगार होगी। यह भी कि अभिजात वर्ग के बच्चे भी गरीब बच्चों के जीवन से कुछ सीख पाएंगे। दोनों ही तर्क महत्त्वपूर्ण हैं। इसमें शक नहीं है कि यदि निजी स्कूल इसे संजीदगी से क्रियान्वित करें तो यह दो अलग-थलग चलने वाली दुनियाओं के बीच सेतु का काम कर सकता है। लेकिन ड्रॉप-आउट की इस घटना ने इन दोनों ही संभावनाओं पर प्रश्न खड़े कर दिए हैं।

कानून के नोटिफिकेशन के बाद से ही निजी स्कूलों ने इस प्रावधान का कड़ा विरोध किया। निजी स्कूलों के विरोध को उनके हित एवं मानसिकता के संदर्भ में समझा जा सकता है लेकिन सरकारी तंत्र ने भी इसे संजीदगी से नहीं लिया बल्कि उनके लिए यह उनकी 'शक्ति/सत्ता' के इस्तेमाल का हथियार बनकर रह गया। शिक्षा विभाग के पास स्कूलों को मान्यता प्रदान करने के तमाम प्रावधानों के बावजूद निजी स्कूलों की संख्या

की कोई प्रमाणिक जानकारी उपलब्ध नहीं थी जो संभवतः पिछले दो सालों में एकत्रित कर ली गई है। इसके साथ ही कानून के समुचित क्रियान्वयन के लिए यह आवश्यक है कि इस कानून पर इन निजी स्कूलों के प्रबंधकों एवं समस्त अध्यापकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाए। सरकार और शिक्षा विभाग ने इस कानून पर इन स्कूलों के लिए विधिवत प्रशिक्षण का प्रावधान नहीं किया है। अतः कानूनी बाध्यता होने की वजह से वे बजाय पूरे कानून के प्रावधानों के क्रियान्वयन के बस आरक्षित कोटे में प्रवेश के प्रावधान को ही लागू कर रहे हैं और कानून के शेष प्रावधान नजरअंदाज हो रहे हैं। उदाहरण के लिए, यह कानून स्कूलों में किसी बच्चे के साथ प्रताड़ना का निषेध करता है जबकि आए दिन खबरों से पता चलता है कि बच्चों को शारीरिक दण्ड दिया जा रहा है और स्कूलों में बच्चों के साथ जाति, लिंग, धर्म, वर्ग आदि के आधार पर भेदभाव होता है।

कानून कहता है कि कोई भी स्कूल बच्चे के प्रवेश के वक्त बच्चे की परीक्षा अथवा माता-पिता का साक्षात्कार नहीं लेगा। इसके बावजूद तमाम निजी स्कूल इसे जारी रखे हुए हैं। उन्होंने इसके अनौपचारिक तरीके निकाल लिए हैं। कर रहे हैं। निजी स्कूलों में डोनेशन लेने पर आर्थिक दण्ड का प्रावधान है जबकि इन स्कूलों ने इसके भी गुप्त तरीके खोज लिए हैं।

जयपुर के अनेक निजी स्कूलों के अवलोकन में मैंने पाया कि उपरोक्त समस्याओं के अलावा इन 25 प्रतिशत बच्चों के प्रवेश को लेकर अनेक बुनियादी समस्याएं मौजूद हैं। राजस्थान में गरीब एवं पिछड़े वर्ग के बच्चों के प्रवेश के लिए आय की अधिकतम सीमा ढाई लाख निर्धारित की गई है। अतः तमाम ऐसे माता-पिताओं ने जिनका बिजनेस है और जो अपनी आय को नहीं दर्शाते, उन्होंने आय के फर्जी प्रमाण पत्र बनावाकर अपने बच्चों को मंहगे निजी स्कूलों में प्रवेश करवा दिया है। अनेक निजी स्कूल प्रबंधकों का कहना था कि ढाई लाख की आय सीमा के चलते उनके यहां अनेक प्रवेश फर्जी हुए हैं। साथ ही, वास्तव में प्रवेश के हकदारों तक इसकी समुचित सूचना भी नहीं पहुंच पाई है।

बड़े निजी स्कूलों ने 25 प्रतिशत आरक्षित कोटे के इन प्रवेशों के लिए एक अन्य रास्ता ही निकाल लिया है। इन स्कूलों में इस कानून से पहले ही यह प्रावधान था कि ये स्कूल में कार्यरत कार्मिकों, जैसे चपरासी, बाई एवं बस ड्राइवर आदि के बच्चों के लिए मुफ्त शिक्षा प्रदान करेंगे। क्योंकि इन कार्मिकों का वेतन बहुत कम होता है। ऐसे निजी स्कूलों ने 25 प्रतिशत आरक्षित कोटे में इन स्कूलों ने उन बच्चों को भी शामिल कर लिया है।

निजी स्कूलों में प्रवेश पाने वाले बच्चों और उनके माता-पिताओं के लिए भी अनेक तरह की चुनौतियां हैं। इन मंहगे स्कूलों में खास दुकानों से खास ब्रांड की यूनीफॉर्म और पाठ्यसामग्री सुझाई जाती है। जिसे खरीद पाना हर माता-पिता के बूते में नहीं होता। एक दूसरी चिन्ता यह भी उत्पन्न होती है कि कहीं इन बच्चों के साथ ऐसा बर्ताव न हो कि इनकी उपस्थिति वहां पर अनचाही है और इन्हें उपेक्षा के भाव को भुगतना पड़ता हो। यदि हमें बच्चों को इन मनोभावों से बचाना है तो कानून को बेहतर रूप से लागू करने के लिए सरकार को प्रभावी कदम उठाने होंगे।

कानून के बेहतर क्रियान्वयन के लिए सबसे पहली आवश्यकता सभी स्कूलों (सरकारी एवं निजी) के समस्त अध्यापकों एवं प्रबंधकों के लिए शिक्षा के अधिकार कानून पर प्रशिक्षण की अनिवार्य व्यवस्था की जाए। इसके साथ ही कानून के क्रियान्वयन की समुचित निगहबानी के लिए सतत शोध करवाए जाएं ताकि समस्याएं समय रहते उजागर होती रहें और उनके लिए उपयुक्त रणनीति बनाई जा सके। ◆